B.A. (Hons) Part III
Philosophy - Paper V
Topic Nature of Religion
Dr. Sachidamand Prasad.
Department of Philosophy.
R.R.S. College, Mokama.

धर्म के संबंध में यह कहा गया है कि धर्म मनोविज्ञान की तरह एक मानसिक क्रिया है क्योंकि मस्तिष्क का कोई भी एक अंग उसकी व्याख्या करने में असमर्थ है। विद्वानों का कहना है कि धर्म के लिए तीन आवश्यक तत्वों का होना जरूरी है।

① बुद्धि ② भावना ③ क्रिया।

इसप्रकार यह कहा जा सकता है कि धर्म का संबंध मानव के आन्तरिक जीवन से है जिसमे हमलोगोंको उपरोक्त तीन तत्वों का समावेश मिलता है। अर्थात हमलोग यह कह सकते है कि धर्म ईश्वर के प्रति व्यक्ति की सम्पूर्ण प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति ईश्वर के सम्बंध मे अपनी बुद्धि और विवेक की सहायता से खोज करता है उसे अनुभव करता है तथा अपनी अनुभूतियों को बाह्य क्रियाओं की सहायता से व्यक्त करता है।

धर्म आंशिक रूप से बौद्धिक कहा जा सकता है। परम्परागत युक्तियाँ इस बात का प्रमाण है कि मानव आदिकाल से लेकर अबतक ईश्वर के संबंध में चिन्तन करता रहा है और वह ईश्वर को बुद्धि की सहायता से प्रमाणित करना चाहता है। वह ईश्वर को सिद्ध करने के लिए तर्क का सहारा लेता है। इसप्रकार तर्क की सहायता से वह ईश्वर के संबंध मे एक विचार बना लेता है। इसतरह यह सही-सही नहि कहा जा सकता है कि मानव आजतक ईश्वर के संबंध में जो कुछ भी जाना है, वह ठीक है लेकिन निःसंदेह यह कहा जा सकता है कि मनुष्य ~~धर्म~~ ईश्वर के बारे मे जो कुछ भी जानने की कोशिश की है वह उसकी बुद्धि का परिचायक है। इसप्रकार धर्म में बुद्धि का महत्वपूर्ण स्थान है।

यह ठीक है कि धर्म मे बुद्धि का महत्वपूर्ण स्थान है लेकिन धर्म मे भावना का भी महत्वपूर्ण स्थान है। धर्म मे धार्मिक व्यक्ति यह महसूस करता है कि वह स्वयं किसि कार्य को नही कर सकता है उस कार्य की पूर्ति ईश्वर की सहायता से संभव है। धार्मिक व्यक्ति ईश्वर से भय खाता है क्योंकि वह जानता है कि गलत कार्य करने पर उसे ईश्वर

के द्वारा सजा मिलेगी। इसलिए वह यह भी जानता है कि संसार का प्रत्येक कार्य ईश्वर के द्वारा ही संचालित होता है। अतः धर्म में साधना का महत्वपूर्ण स्थान है धर्म में बुद्धि और साधना के साथ क्रिया का भी महत्वपूर्ण स्थान है। व्यक्ति अपनी बुद्धि की सहायता से ईश्वर के संबंध में ज्ञान प्राप्त करता है और उसे सर्वज्ञानी, सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापी जानकर उसकी पूजा करता है।

धर्म के दो प्रमुख अंग है।
① आन्तरिक ② वस्तुनिष्ठ।
एक पूजा का विषय अर्थात् बाहरी तत्व और दूसरा उपासक अर्थात् वह जो बाहरी तत्व की उपासना करता है। आन्तरिक तत्व में हमलोग विवेक, अनुभव और बाह्य क्रियाओं का योग पाते है और बाह्य तत्व में हम एक अदृश्य सत्ता अर्थात ईश्वर की कल्पना करते है जिसकी आराधना होती है। धर्म में उपास्य एवं उपासक के बीच भेद रहना आवश्यक है। उपास्य में उपासक के प्रति करुणा, क्षमा, प्रेम की भावना अन्तर्भूत रहती है

Page No.
Date / /

(5)

और उपासक मे उपास्य के प्रति निर्भरता, श्रद्धा, भय, आत्मसमर्पण की भावना रहती है। इसप्रकार हमलोग यह कह सकते है कि धर्म की निम्नलिखित विशेषताएँ है।

(1) धर्म का स्वरूप Holistic है क्योंकि धर्म मे बुद्धि, भावना और क्रिया का संयोजन पाया जाता है।

(2) धर्म की दूसरी विशेषता धार्मिक अनुभूति का अनूठा एवं असाधारण होना है क्योंकि इसकी तुलना संसार के किसी भी अनुभूति से संभव नही है। धार्मिक अनुभूति अकथनीय है।

(3) धर्म की तीसरी विशेषता धर्म मे सामाजिकता का रहना कहा जा सकता है। जिसप्रकार व्यक्तिगत भाषा संभव नही है उसीप्रकार व्यक्तिगत धर्म भी संभव नहीं है। यही कारण है कि गैलवे "आराधना और सेवा" तथा मार्टिन्यु "नैतिक संबंध" पर बल देते है।